आदिवासियों की उम्मीद थे सुनील भाई

बाबा मायाराम

सुनील भाई नहीं रहे, यह विश्वास करना मुश्किल हो रहा है। जब 16 अप्रैल को उनकी तबीयत बिगड़ी और स्मिता जी और मैं उन्हें इटारसी ले जा रहे थे, तब मैंने उनकी टेबल पर उसी सुबह वार्ता के लिए लिखा अधूरा संपादकीय छोड़ दिया था, यह सोचकर कि वे इटारसी से लौटकर उसे पूरा करेंगे। अब वह अधूरा ही रहेगा।

सुनील भाई को इटारसी में डाॅक्टर को दिखाया तो बताया गया उन्हें पक्षाघात (लकवा) की शिकायत है, जल्द भोपाल ले जाना होगा। इटारसी और भोपाल का रास्ता लंबा है और सड़कें बदहाल, गड्ढे और धूल से भरी हुई। रास्ते में उन्हें तीन उल्टियां हुईं और अंतिम उल्टी में खून आया था।
भोपाल में सुनील भाई के छोटे भाई सोमेश जो खुद डाॅक्टर हैं, पहले से मौजूद थे। अस्पताल पहुंचते ही जांच के लिए ले जाया गया, जहां पता चला कि ब्रेन हेमरेज हुआ है और तत्काल आॅपरेशन करना पड़ेगा। आॅपरेशन हुआ भी पर हालत में सुधार नहीं हुआ। भोपाल से दिल्ली के एम्स में ले जाया गया, जहां उनकी हालत जस की तस बनी रही। आखिरकार 21 अप्रैल, 2014 को सुनील भाई ने अंतिम सांस ले ली।

सुनील भाई से मेरा परिचय 1985 के आसपास हुआ, जब वे दिल्ली छोड़कर केसला आ गए थे। केसला के जंगल और नदी के किनारे बांसलाखेड़ा है, जहां राजनारायण के साथ सुनील रहते थे। यह बहुत रमणीक स्थान था। इटारसी शहर का युवा राजनारायण यहां अकेला ही रह रहा था और क्षेत्र के आदिवासियों को संगठित कर उनमें चेतना जगाने का काम कर रहा था।

मैं उस समय करीब माह भर रहा और सुनील भाई और राजनारायण के साथ गांव-गांव घूमा। होशंगाबाद जिले का केसला विकासखंड आदिवासी बहुल है। यहां गोंड और कोरकू आदिवासी रहते हैं। इस इलाके में दो समस्याएं प्रमुख थी-एक पानी की और दूसरी विस्थापन की। पीने का पानी की समस्या तो थी ही, खेत भी प्यासे थे। इस इलाके के 44 गांव तवा बांध से विस्थापित हुए, लेकिन इनके खेतों तक नहरें नहीं पहुंची, पानी मिला ऊपरी हिस्से को।

इसी प्रकार भारतीय फौज द्वारा गोला-बारूद के परीक्षण के लिए बनाई गई प्रूफरेंज में यहां के 26 गांव उजाड़े गए। आर्डिनेंस फ़ैक्टरी से 9 गांवों की जमीनें गईं और अब सतपुड़ा टाईगर रिजर्व से सैकड़ों सालों से बसे गांवों को उजाड़ा जा रहा है। यह पूरा जिला उजाड़े और भगाए गए लोगों का बन गया है। सुनील भाई विस्थापितों के संघर्ष से गहरे रूप से जुड़े थे।
महीने भर की तैयारी के बाद 1985 में पानी लाओ संघर्ष मोर्चा बना और इसके तहत केसला से होशंगाबाद पदयात्रा की गई जिसमें करीब 100 आदिवासी शामिल थे। मुट्ठी बांधकर, हवा में हाथ लहराकर नारे लगाते हुए इन असहाय और गरीब समझे जाने वाले आदिवासियों को देखकर मैं ऊर्जा से भर उठा।

इसके बाद मैं इस इलाके में सैकड़ों बार गया। 1995-96 के दौरान यह, रहा भी। यह स्थान हमेशा मेरे लिए एक तीर्थस्थल की तरह रहा। जैसे कोई बनारस और हरिद्वार जाता है और वहां से कोई अच्छाई लाता है। मैं भी यहां हमेशा कुछ अच्छाई ढूढ़ता था। अच्छे विचार सुनता-समझता था। और सुनील भाई से सवाल करता था- वे बहुत सहज थे और खुले हुए थे। उनका सब कुछ सबके लिए था। उनसे किसी भी मुद्दे पर कभी भी बात की जा सकती थी। बहस और बातचीत की जा सकती थी। उनका और उनकी पत्नी स्मिता जी का स्नेह मुझे ही नहीं मेरे जैसे कई लोगों को मिला, जो उनके हो गए और सामाजिक क्षेत्र में सक्रिय हो गए।

सुनील और राजनारायण ने आदिवासियों के साथ मिलकर 1985 में किसान आदिवासी संगठन का गठन किया। और यहीं से शुरू हो गया आदिवासियों के हक और इज्जत की लंबी लड़ाई का सिलसिला। गांव-गांव में बैठकें होने लगीं। पर बीच में एक धक्का लगा। 1990 में राजनारायण की एक सड़क हादसे में मौत हो गई। सुनील भाई ने हिम्मत नहीं हारी, अकेले ही टिके रहे। धीरे-धीरे फागराम, गुलिया बाई और विस्तोरी जैसे नए कार्यकर्ता तैयार हुए और संगठन फिर बढ़ने लगा।

लंबी लड़ाई के बाद तवा बांध पर विस्थापितों को मछली का अधिकार मिला। सुनील भाई के नेतृत्व में अभूतपूर्व सफलता मिली। अगर स्थानीय संसाधनों-जल, जंगल, जमीन पर स्थानीय लोगों को अधिकार दिया जाए तो उनका संरक्षण भी होगा और लोगों को रोजगार भी मिलेगा, यह काम इसकी बेहतरीन मिसाल है।

सुनील भाई अपने छात्र जीवन से ही विख्यात समाजवादी किशन पटनायक व समाजवादी विचारों से जुड़ गए। जब वे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय दिल्ली में अध्ययनरत थे तब वे अपने साथियों के साथ 'समता एरा' नामक पत्रिका का संपादन करते थे और खुद ही उसे छात्रों में बांटते थे। उस समय उन्होंने असम आंदोलन के समर्थन में दिल्ली से गुवाहाटी तक साईकिल यात्रा व सिख विरोधी दंगों के खिलाफ पंजाब से दिल्ली अमृतसर पदयात्रा की।

पूंजीवाद के विकल्प के रूप में समाजवाद के हिमायती थे। वे हर तरह की गैरबराबरी के खिलाफ थे। बराबरी और समता पर आधारित समाज चाहते थे। उनका जीवन भी वैसा ही था। न कोई तामझाम और न आडंबर। न घर में टीवी है, न कोई वाहन। न जमीन, न कोई जायदाद। सरल और सादा जीवन। सीमित जरूरतें। उनका जीवन बहुत ही सादगीपूर्ण था। उनकी अडिग सिद्धांतनिष्ठा, ईमादारी और तपे हुए जीवन का कोई जोड़ नहीं हैं। संत की तरह जीवन जीने वाले सुनील भाई में व्यवस्था परिवर्तन की गहरी तड़प थी वे बाबा आम्टे का उदाहरण देते हुए कहते थे की बाबा की भारत जोड़ो यात्रा के दौरान कई युवा जुड़े। हमें भी देश में लंबी यात्रा करनी चाहिए जिससे नए युवा जुड़े। और वे परिवर्तन के वाहक बने।

आमतौर पर राज चाय बनाकर कार्यकर्ताओं को पिलाना इत्यादि बहुत से काम। उन्हें भीड़ में बैठकर विज्ञप्ति व पर्चे लिखते देखा जा सकता था, उन्हें हाथ से लिखना पसंद था।

दुबला पतला शरीर, दाढ़ी, चश्मा और स्मित मुस्कान ही उनकी पहचान थी। उनके कंधे पर टंगे झोले में पर्चे, पुस्तिकाएं और सामयिक वार्ता होती थी। वे पैदल चलना पसंद करते थे। मितभाषी और अल्पहारी तो थे ही। लेकिन जब वे भाषण देते थे तो उनके कंठ में सरस्वती विराजमान हो जाती थीं। उनमें भीड़ खींचने और उसे बांधे रखने की अद्भूत क्षमता थी। वे एक अर्थशास्त्री थे जिस सरल ढंग से वे अर्थव्यवस्था की बारीकियों को समझाते थे, उसकी कोई सानी नहीं है। उनके लेख राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते थे।

सुनील भाई निचले स्तर से जनशक्ति के माध्यम से बदलाव चाहते थे। आदिवासी, किसान और वंचित तबकों की समस्याओं के लिए उन्हें ही संगठित कर उनका हल ढूंढ़ते थे। हरदा, बैतूल और होशंगाबाद में बरसों से यह कोशिशें की जा रही हैं। देश के अलग-अलग कोनों में भी समाजवादी जनपरिषद के साथी यह प्रयास कर रहे थे। ओड़िशा में नियमगिरि की लड़ाई इसका अच्छा उदाहरण है।

पिछले डेढ़ साल से सामयिक वार्ता दिल्ली से इटारसी आ गई वे चाहते थे कि देश में वैचारिक बहस चलते रहना चाहिए। वार्ता इसका माध्यम बने। कार्यकर्ताओं के वैचारिक प्रशिक्षण व देश-दुनिया के बदलाव व विचारों को जानने का यह जरिया बने। वैकल्पिक राजनीति के वे प्रमुख सिद्धांतकारों में एक थे। वे चाहते थे व्यवस्था में बदलाव हो और इसके विभिन्न पहलुओं पर बहस चले। सही बदलाव तभी होगा।

सामयिक वार्ता के इटारसी आने के बाद सुनील भाई की चिंता उसको लेकर हमेशा बनी रही। वे इसकी सामग्री से लेकर वितरण तक की चिंता करते थे। हम लोग हर अंक के बारे में योजना बनाते थे। यह अंक क्रोनी कैपिटलिज्म पर है। यह सुझाव भी सुनील भाई का था। वार्ता के इस अंक के संपादन का पूरा कार्य सुनील भाई के अंतिम कार्यों में से एक है। बीमार होने के कुछ समय पहले तक वे वार्ता का काम कर रहे थे। उनकी खास बात यह भी थी कि आदिवासी गांव में रहकर देश-दुनिया के बदलावों पर पैनी नजर रखते थे। हाल ही में हमने लातीनी अमरीका पर वार्ता का अंक निकाला था।

जब समाज में जीवन मूल्य इतने गिर गए हों, कोई बिना लोभ-लालच के सार्वजनिक व राजनैतिक काम न करता हो, सुनील भाई जैसे लोगों को देखकर किसी भी देशप्रेमी का दिल उछल सकता है। अल्बर्ट आइंस्टीन ने गांधी के लिए कहा था कि '**आनेवाली पीढ़ियां शायद मुश्किल से ही यह विश्वास करेंगी कि गांधीजी जैसा हाड़ मांस का पुतला कभी इस धरती पर हुआ होगा।**' सुनील भाई के लिए भी यह कथन सटीक बैठता है।

लेकिन भारतीय लोकमानस में महान व्यक्तियों व महापुरूषों का गुणगान करने की परंपरा है। इससे हम अपने दायित्व से स्वतः ही मुक्त हो जाते हैं। सुनील भाई का व्यक्तित्व और जीवन प्रेरणादायी है। वे रचना और संघर्ष के रास्ते पर चलकर समाजवाद और नई दुनिया का सपना देखते थे। अगर हम उनके इस काम को कुछ आगे बढ़ा सकें तो यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।